International Journal of Sanskrit Research 2019; 5(4): 274-275

International Journal of Sanskrit Research

अनन्ता

ISSN: 2394-7519
IJSR 2019; 5(4): 274-275
© 2019 IJSR
www.anantaajournal.com
Received: 13-05-2019
Accepted: 15-06-2019

डॉ. उमाशंकर
सहायक आचार्य, संस्कृत–विभाग
दिल्ली विश्वविद्यालय, दिल्ली, भारत

Correspondence
डॉ. उमाशंकर
सहायक आचार्य, संस्कृत–विभाग
दिल्ली विश्वविद्यालय, दिल्ली, भारत

जलसंरक्षण और आचार्य वराहमिहिर

डॉ. उमाशंकर

सारांश
वर्तमान में हमारे समक्ष बहुत–सी समस्याएँ हैं। आगामी समय में एक भयावह समस्या आने वाली है जिसका अभी से उचित समाधान आवश्यक है, वह है – शुद्ध पेयजल की समस्या। इसका असर अभी से दिखाई देने लगा है। अतः वर्तमान में जलप्रबंधन या जलसंरक्षण अति आवश्यक है। यह जलप्रबंधन या जलसंरक्षण किस प्रकार किया जाए इसके लिए आचार्य वराहमिहिर ने बृहत्संहिता नामक ग्रन्थ में विस्तृत वर्णन किया है। इस शोध–पत्र के माध्यम से यह प्रयास किया गया है कि हम किस प्रकार हमारी प्राचीन ऋषि–परम्परा से प्रदत्त ज्ञान द्वारा जल–संरक्षण कर विश्व का कल्याण कर सकते हैं।

कूटशब्दः उदकार्गला, जलशिरा, नैर्ऋति, ईशान्, महाशिरा

प्रस्तावना
जल ही जीवन है। भूमण्डल पर 71 प्रतिशत जल है और 29 प्रतिशत भूमि है। जलविज्ञान की अवधारणा अत्यन्त प्राचीन है। अगर हम विश्व की प्राचीन सभ्यताओं पर दृष्टिपात करें तो यह स्पष्ट हो जाता है कि सिन्धु घाटी सभ्यता–सिन्धु नदी के तट पर, आर्य सभ्यता–गंगा–यमुना नदी के तट पर, मिस्त्र सभ्यता–नील नदी के तट पर, इराक–दजला और फरात नदी के तट पर बसे थे। अतः जल की आवश्यकता स्पष्ट है।

जलपरिज्ञान व शिरा ज्ञान
मनुष्य ने अपने अनुभव व ज्ञान के आधार पर जल प्राप्ति हेतु उपयुक्त स्थानों पर गड्ढे खोदने शुरू किए, जिसके परिणामस्वरूप कूप संस्कृति का विकास हुआ और जल संग्रहण भी आरम्भ हुआ। यह कूप निर्माण और जलसंरक्षण विधि जलविज्ञान कहलाती है। आचार्य वराहमिहिर ने बृहत्संहिता में भूमिका जल ज्ञान की विधि को उदकार्गल कहा है। [1] यह तथ्य स्पष्ट है कि दुर्भिक्ष की स्थिति में भी कूप और बावड़ियों का जलस्तर बना रहता है। इसका कारण यह है कि भूमि व वृक्षों से भूमिगत जल का बोध, कूप और बावड़ियों के निर्माण में दिक् विचार और कूप खोदने हेतु मुहूर्त्त विचार। इस प्रकार कूपादि की जलसंरक्षण में महत्त्वपूर्ण भूमिका है। किन्तु वर्तमान में कूप और बावड़ी निर्माण का प्रचलन नहीं है। प्राचीन समय में लोगों को उदकार्गल विषय का पूर्ण ज्ञान था जिसमें शिरा ज्ञान बहुत ही महत्त्वपूर्ण था। शिराएँ आठ प्रकार की होती हैं। [2] भूमि में इन्द्र, अग्नि, यम, नैर्ऋति, वरूण, वायु, चन्द्र और शंकर क्रमशः आगे दिशाओं के देवता हैं। इन्हीं आठ दिशाओं के देवताओं के नाम पर ऐन्द्री, आग्नेयी, याम्या, नैर्ऋति, वारूणी, वायवी, चान्द्री और शांकरी पूर्वादिक्रम से आठ शिराएँ होती है। मध्य में नवमी शिरा 'महाशिरा' होती है। [3] पाताल से ऊपर की तरफ मध्य में स्थित व पूर्वादि दिशाओं में स्थित शिराएँ शुभ मानी जाती हैं। [4] जहाँ ऐसी शिराएँ प्रदर्शित होती हों, वहाँ जलसंरक्षण हेतु खुदवाये गए कूपों में कई वर्षा तक जल संरक्षित रहता है।

भूमि में शिरा ज्ञान की कई विधियाँ अपनायी जाती थी, यथा –

भूतल के वृक्षों से जल की स्थिति – आचार्य वराहमिहिर के अनुसार जिस वृक्ष की शाखा नीचे की ओर झुकी हो और पीली पड़ गयी हो तो शाखा के नीचे 360 अंगुल लगभग 16 फीट खुदाई पर जल मिलता है [5], जहाँ स्निग्ध छिद्र रहित पत्रों से युक्त – वृक्ष, गुल्म या लता हो वहाँ पर भी 360 अंगुल नीचे प्रचुर मात्रा में जल की प्राप्ति होती है। यह नियम काश, नलिका, नल, खजूर, जामुन, अर्जुन, बेंत एवं दूध वाले सभी वृक्ष लताओं पर लागू होता है। [6]
कादम्ब वृक्ष से भी शिरा ज्ञान होता है, जिसे उत्तरा शिरा कहा जाता है।यदि कदम्ब वृक्ष से पश्चिम में बॉबी हों उससे दक्षिण दिशा में तीन हाथ की दूरी पर पौने छह पुरुष (690) अंगुल नीचे जल होता है।

ऐसी जल शिरा अति विपुल होकर लौह की गन्ध से युक्त होती है।[7] इसी प्रकार दक्षिण शिरा भी वृक्ष से ही ज्ञात की जा सकती है जैसे यदि बाँबी से युक्त नारियल का वृक्ष हो तो उस वृक्ष से छह हाथ पश्चिम दिशा में चार पुरुष (480 अंगुल) नीचे दक्षिण शिरा होती है। [8]

फल–पुष्पों से शिरा जल ज्ञानः आचार्य वराहमिहिर के अनुसार जिस वृक्ष के फल पुष्पों में विकार पैदा हो, उस वृक्ष से तीन हाथ पर पूर्व दिशा में चार पुरुष (480 अंगुल) नीचे जल की शिरा मिलती है तथा नीचे पत्थर और पीली भूमि मिलती है। [9] जहाँ काँटों से रहित सफेद पुष्पों से युक्त कटेरी का वृक्ष दिखाई दे उस वृक्ष के नीचे साढे तीन पुरुष (420 अंगुल) नीचे खोदने से जल निकलता है। [10] वराहमिहिर ने शमी, हरिद्र, कपित्थ, जामुन, खजूर, गूलर, बिल्ववृक्ष, बेर, वट आदि कुल 86 प्रकार के वृक्षों के नीचे जलशिराओं के विषय में बताया है।

धान्य से शिरा जल ज्ञानः प्राचीन समय में खेतों के धान्य आदि से भी भूमिगत शिरा की स्थिति ज्ञात कर ली जाती थी। आचार्य वराहमिहिर कहते हैं कि जिस खेत में धान्य उत्पन्न होकर नष्ट हो जाए, बहुत निर्मल धान्य हो अथवा धान्य उत्पन्न होकर पीला पड़ जाए, वहाँ दो पुरुष (240 अंगुल) नीचे बहुत जल वाली शिरा होती है। [11]

वाष्प और धूमादि से जल ज्ञानः आचार्य वराहमिहिर कहते हैं कि जिस स्थान से भाप या धुआँ निकलता हुआ दिखाई दे वहाँ 2 पुरुष (240 अंगुल) नीचे बहुत जल वाली शिरा बहती है। [12]

दो वृक्षों के संयोग से जल ज्ञानः आचार्य वराहमिहिर ने दो वृक्षों के संयोग से बनी जल–स्थिति पर भी विशेष रूप से विचार किया है। वे कहते हैं कि यदि बेर व लाल करण ये दोनों वृक्ष एकत्रित हो तो इनके तीन हाथ पश्चिम दिशा में सोलह पुरुष नीचे जल होता है और मीठा होता है। इसी प्रकार करील और बेर में अठारह पुरुष नीचे, पीलु और बेर में बीस पुरुष नीचे, अर्जुन और करीर में पच्चीस पुरुष नीचे जल मिलता है। [13]

भूमि लक्षण से जल परिज्ञानः आचार्य वराहमिहिर ने मात्र भूमि परीक्षण से भूगर्भ जल की स्थिति का पता लगाने हेतु बताया है कि जहाँ सब जगह धर्म की स्थिति का पता लगाने हेतु बताया है कि जहाँ सब जगह गर्म और एक जगह ठण्डी भूमि दिखलाई दे अथवा सब जगह ठण्डी और एक जगह गर्म भूमि प्रतीत हो तो उस जगह से साढ़े तीन पुरुष (420 अंगुल) नीचे जल होता है। [14] जिस भूमि पर पाँव रखने से वह दब जाए और बिना रहने के स्थान कीड़े हों, उस भूमि के डेढ पुरुष (180 अंगुल) नीचे जल का स्त्रोत होता है।[15]

कूप एवं बावड़ियों के निर्माण में दिक् विचार

किसी ग्राम या नगर में आग्नेय कोण में (दक्षिण–पूर्व) में कूप नहीं होना चाहिए क्योंकि ऐसा होने पर वह कूप जल्दी ही सूख जाता है और अग्निभय भी उत्पन्न करता है। नैर्ऋत्य दिशा में (दक्षिण–पश्चिम) कूप बालकों का भय तथा वायव्य कोण (उत्तर–पश्चिम) में कूप होने पर स्त्रियों को भी भय देता है। [16] जल का संग्रहण ईशान् कोण (उत्तर–पूर्व) में ही शुभ है। पश्चिम दिशा में सम्पत्तिदायक है। पश्चिम और पूर्व दिशा में फैली हुई वापी लम्बे समय तक जल संग्रहित करती है। उत्तर–दक्षिण या दक्षिण–उत्तर दिशा में फैली लम्बी वापी में जल अधिक समय तक संग्रहित नहीं रहता, शीघ्र सूख जाता है। [17]

कूपादि निर्माण में मुहूर्त्त परिज्ञान

जब जल युक्त भूमि का शोधन हो जाए तो कूपारम्भ के मुहूर्त्त की आवश्यकता होती है। आचार्य वराहमिहिर के अनुसार हस्त, मघा, अनुराधा, पुष्य, धनिष्ठा, तीनों उत्तरा, रोहिणी, शतभिषा इन नक्षत्रों से कुआँ खोदना शुभ होता है। इस अवसर पर वरूण को बलि देकर गन्ध, पुष्प, धूप आदि से बड़ या बेतस की लकड़ी की कील की पूजा करके पहले शिरा स्थान में उसकी गाड़े बाद में खनन प्रारम्भ करें। [18]

जलशुद्धि का विधान

कूप का जल यदि गब्दला, कड़वा या दुर्गन्ध वाला हो तो अंजन, मोथा, खस, आँवला इन सबका चूर्ण कूप में डालें। इन औषधियों के प्रभाव से जल निर्मल, मधुर, सुन्दर सुगन्ध वाला और गुणों से युक्त हो जाता है। [19]

इस प्रकार स्पष्ट है कि आचार्य वराहमिहिर ने बृहत्संहिता के दकार्गलाध्याय में केवल जल ही नहीं अपितु वनस्पतिशास्त्र के विलक्षण ज्ञाता होने का भी परिचय दिया है। उपरोक्त विधियों के माध्यम से हम जलशिराओं का पता लगाकर जलस्त्रोतों का निर्माण कर सकते हैं। ये विधियाँ जलसंरक्षण में निश्चित रूप से लाभकारी है।

संदर्भ ग्रन्थ सूची

1. बृहत्संहिता, दकार्गलाध्याय 54, श्लोक–1, पृ. 275.
2. बृहत्संहिता, दकार्गलाध्याय 54, श्लोक–1, पृ. 275.
3. वही, श्लोक–4, पृ. 276.
4. वही, श्लोक–4, पृ. 276.
5. वृक्षस्यैका शाखा यदि विनता भवति पाण्डुरा वा स्यात्।
   विज्ञातव्यं शाखातले जलं त्रिपुरूषं खात्वा।।
   बृहत्संहिता, दकार्गलाध्याय 54, श्लोक–44, पृ. 282.
6. वही, श्लोक–100–102, पृ. 290.
7. वही, श्लोक–37–38, पृ. 281.
8. वही, श्लोक–40, पृ. 281.
9. फलकुसुमविकारो यस्य, तस्य पूर्वे शिरा त्रिर्भिहस्तैः।
   भवति पुरुषैश्चतुर्भिः पाषाणोऽधः क्षितिः पीता।।
   बृहत्संहिता, अध्याय–54, श्लोक–56, पृ. 286.
10. वही, श्लोक–57, पृ. 286.
11. यस्मिन् क्षेत्रोद्देशे जातं सस्यं विनाशमुपयाति।
    स्निग्धपतिपाण्डुरं वा महाशिरा नरयुगे तत्र।।
    बृहत्संहिता, अध्याय–54, श्लोक–61, पृ. 287.
12. यस्यामूष्मा धात्रयां धूमो वा तत्र वादि नरयुगले।
    निर्देष्टव्या च शिरा महता तोयप्रवाहेण।।
    बृहत्संहिता, अध्याय–54, श्लोक–10, पृ. 287.
13. वही, श्लोक–72–76, पृ. 288.
14. वही, श्लोक–94, पृ. 289.
15. नमते यत्र धरित्री सार्धे पुरुषेऽम्बु जाङ्गलानूपे।
    कीटा का यत्र विनालयेन बहवोऽम्बु तत्रापि।।
    बृहत्संहिता, अध्याय–54, श्लोक–23, पृ. 279.
16. वही, श्लोक–97–98, पृ. 289.
17. वही, श्लोक–118, पृ. 293.
18. वही, श्लोक–124, पृ. 295.
19. अञ्जनमुस्तोशीरैः शराजकोशातकामलकचूर्णैः।
    कतकफल समायुक्तैर्योगः कूपे प्रदातव्यः।।
    बृहत्संहिता, अध्याय–54, श्लोक–121, पृ. 294.